नागार्जुन तथा बिष्णु प्रसाद राभा का काव्य : एक विवेचन

वहीदा परवेज

हिंदी कविता का आधुनिक काल काफी उर्वर रहा है। इस साहित्यिक-युग की कविताओं का स्वर विविधिताओं से भरा हुआ है।

भारतेंदु युग से समकालीन कविता तक, आधुनिक काव्य को राजनीतिक चेतना अलग अलग तरीके से प्रभावित, संचालित करती आ रही है। हिंदी साहित्य के फलक को राष्ट्रवाद, गांधीवाद आदि राजनैतिक विचारधाराओं ने वृहत आयाम दिया है, परंतु एक राजनीतिक आंदोलन के रूप में सबसे स्पष्ट स्वर हिंदी साहित्य की प्रगतिवादी काव्यधारा में दिखाई देता है। जनकवि नागार्जुन का संबंध हिंदी साहित्य की इसी काव्यधारा से है। उनकी कविता समाज के वंचित वर्ग के पक्ष में हमेशा खड़ी दिखाई देती है।

ठीक उसी समय असमिया साहित्य में एक ऐसे कवि जन्मे जिन्होंने असमिया साहित्य को राजनीतिक और सांस्कृतिक धरातल पर एक बड़े मुकाम पर पहुँचाया। वे आज असमिया साहित्य में विशेष स्थान रखते हैं। 31 जनवरी, 1909 ई. को ढाका (बांग्लादेश) में बिष्णु प्रसाद राभा का जन्म हुआ जो आगे जाकर असमिया साहित्य के शिखर रचनाकार के रूप में प्रतिष्ठित हुए।

नागार्जुन का जन्म बिहार के मधुबनी जिले में 30 जून, 1911 ई. को हुआ। नागार्जुन एक ऐसे कवि थे जो अपने समय और समाज की जरूरतों के प्रति आवाज मुखरित करना अपनी प्राथमिकता समझते थे। उनका अधिकांश काव्य वंचित वर्ग की समस्याओं और सत्ता के दमन के खिलाफ संघर्ष की अभिव्यक्ति है। नागार्जुन के काव्य के अध्ययन से उस समय की राजनैतिक परिस्थितियों, सामाजिक संरचना, साहित्यिक सौंदर्य आदि का पता चल सकता है। स्वाधीनता आंदोलन के दौरान राजनीति का जो स्वरूप निर्धारित हो रहा था, खासकर स्वाधीनता प्राप्ति के बाद देश की राजनीतिक अवस्था जैसी बनी, उसमें नागार्जुन जैसे कवि के लिए उदासीन होकर बैठ पाना संभव नहीं था। चाहे आजादी से पहले ही या बाद में, दोनों लेखक अपनी जनता का

प्रतिनिधित्व करते हुए शासनतंत्र को फटकारते हुए नजर आते हैं। नागार्जुन और बिष्णु राभा दोनों लेखक मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित थे और वामपंथी संगठनों के सदस्य भी रहे, जिसके चलते उन्हें जेल भी जाना पड़ा।

जिस समय नागार्जुन हिंदी पट्टी में जनता की इच्छा और आकांक्षाओं का स्वर बुलंद कर रहें थे, ठीक उसी समय असमिया साहित्य में बिष्णु प्रसाद राभा भी इसी विचारधारा के साथ अपने काव्य के माध्यम से उस क्षेत्र के जनांदोलनों को अभिव्यक्ति दे रहे थे। साहित्य, रंगमंच, अभिनय, निर्देशन, असम के सांस्कृतिक जीवन का शायद ही कोई कोना हो जिस पर बिष्णु राभा की छाप न हो। नागार्जुन की तरह बिष्णु राभा

की कविताओं में भी सत्ता की दमनकारी नीतियों के खिलाफ आक्रोश झलकता है। उनका पूरा साहित्य समाज के निचले तबकों के शोषित, पीड़ित, उपेक्षित और दबे- कुचले लोगों के निमित्त है और साथ ही वे असमिया संस्कृति को भी अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं।

लेखक या कलाकार अपने काम के साथ-साथ अपने व्यक्तित्व से भी जनता के दिलों में सदियों तक राज करते हैं। बिष्णु राभा और नागार्जुन यह दोनों ऐसे ही व्यक्तित्व हैं जिनको हम बार-बार याद करते हैं। जहाँ हिंदी पट्टी में नागार्जुन अपने व्यंग्यात्मक शैली से लोगों में आक्रोश बनाए रखे थे, वहीं बिष्णु राभा अपने प्रेरणात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से जनता को आंदोलित करते रहे। नागार्जुन के राजनीतिक व्यंग्य इस बात का प्रमाण हैं कि उनमें राजनीति के महत्व की पूरी और गंभीर समझ है। समाज और देश की प्रगति के प्रति नागार्जुन अपनी प्रतिबद्धता दर्शाते हुए कहते हैं-

प्रतिबद्ध हूँ, सम्बद्ध हूँ, आबद्ध हूँ,

प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ, प्रतिबद्ध हूँ,

बहुजन समाज की अनुपल प्रगति के निमित्त संकुचित 'स्व' की आपाधापी के निषेधार्थ।'

बिष्णु प्रसाद राभा स्वाधीनता आंदोलन में सिर्फ अंग्रेजों का ही विरोध नहीं करते हैं बल्कि समाज के उन शोषक वर्ग का भी विरोध करते हैं जो अपने ही देश की साधारण जनता का शोषण करते हैं। वे लिखते हैं-

'देशे आछे दुइटी पाठा

एक्टि कालो एक्टि शादा

जोदि देशेर मोंगल चाऊ

दुईटी पाठाके बोली दाऊ।'

(इस देश में काले और गोरे दो तरह के शोषक चेहरे हैं, अगर हम इस देश का मंगल चाहते हैं तो हमें उन दोनों की बलि देनी होगी।)

उनकी ज्यादातर कविताएँ किसानों और मजदूरों के हक में लिखी गयी हैं। स्वाधीनता आंदोलन के दौरान वे किसानों को अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने के लिए प्रोत्साहित करते हुए लिखते हैं-

"हल कूर दा हातुरी लोई रोनो लोई जाऊ बोल आगबढ़ी जाऊ बोल आगबढ़ी जाऊ बोल ओ बनुआ होमोनिया आगबढ़ी जाऊ बोल।''

(किसानों को हल, कूर, हथौड़ा लेकर युद्ध के लिए आगे बढ़ने को आह्वान करते हैं।)

दोनों रचनाकारों की रचनाओं को पढ़कर कई बार हमें ऐसा लगता है कि'नागार्जुन में हम बिष्णु राभा को पढ़ रहे हैं और राभा में नागार्जुन को पढ़ रहे हैं।

नागार्जुन स्वयं को जनकवि घोषित करते हुए कहते हैं- 'जनता मुझसे पूछ रही है क्या बतलाऊं जनकवि हूँ मैं साफ कहूँगा क्यों हकलाऊं।'

ठीक उसी तरह बिष्णु प्रसाद राभा अपने आपको कलाकार स्वीकार करते हुए कहते हैं कि- 'आप लोग मुझे कलाकार मानते हैं। अगर मैं सच में कलाकार हूँ तो वह भगवान ने नहीं बल्कि आमजन ने गढ़ा है।'

प्रथम दृष्टया हम देख सकते हैं कि अलग-अलग भाषा क्षेत्र में ये दोनों कवि अपनी कविताओं के माध्यम से न सिर्फ जनता के दुःख-दर्द को, उनकी पीड़ा को साहित्यिक अभिव्यक्ति दे रहे थे बल्कि सरकारी दमन और तानाशाही के खिलाफ खुद भी सड़कों पर आजीवन संघर्ष करते रहे तथा समरसता की संस्कृति विकसित करते रहे। आज वैचारिक पतन का समय है जो इस देश को प्रभावित कर रहा है। आज के इस कठिन समय में जब हमारी सांस्कृतिक एकता खतरे में है, हमें नागार्जुन और बिष्णु राभा को याद करने की जरुरत है और उनकी आवाज को एक बार और मुखरित करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1- गुंजन, रामनिहाल, 'नागार्जुन रचना प्रसंग और दृष्टि', नीलाभ प्रकाशन, इलाहबाद।

2- गुहाई, हिरेन, 'होइनिक शिल्पी बिष्णु राभा', जर्नल एंपोरियम प्रकाशन, नलबारी।

3- तिवारी, अजय, 'नागार्जुन की कविता', वाणी प्रकाशन, दिल्ली प्रणय, 'नागार्जुन की सामाजिक चेतना', यात्री प्रकाशन, दिल्ली।

4- सिंह, नरेन्द्र, 'सांठोत्तरी हिंदी कविता में जनवादी चेतना' वाणी प्रकाशन, दिल्ली।

5- सिंह, नामवर (संपा.), 'नागार्जुन : प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

6- राय, डॉ अवधेश कुमार, 'कथाकार बाबा नागार्जुन', अनंग प्रकाशन, दिल्ली।

संपर्क : शोधार्थी, हिंदी विभाग,

जामिया मिल्लिया इस्लामिया, विश्वविद्यालय, दिल्ली